अंक : 1, मार्च 2016

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
मार्च 2016, अंक 1

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी०ई०ए०जी० द्वारा प्रकाशित की जा रही है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम०जी० कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004,
फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geagindia@gmail.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं० 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज, 2nd ब्लाक,
3rd स्टेज, बनशंकरी, बैंग्लोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512,
+91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : leisaindia@yahoo.co.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है, जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंग्लोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक
के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्ध सम्पादक
टी.एम.राधा., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
पूर्णिमा, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
रुक्मिणी जी.जी., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं टाईपसेटिंग
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी ऑफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
जी.ई.ए.जी.

लीज़ा पत्रिका के अन्य सम्पादन
लैटिन, अमेरिकन, पश्चिमी अफ्रीकन एवं ब्राजीलियन संस्करण

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कन्नड़, उड़िया, तेलगू, मराठी एवं पंजाबी

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है। फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी।

माइजेरियर के सहयोग एवं जी०ई०ए०जी० के समन्वयन में ए०एम०ई० द्वारा प्रकाशित

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीज़ा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीक और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपनी उपज व आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही बाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है, जो विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करता है। यह भी मुख्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तरीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, डक्कन के अर्द्धशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के बीच विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्धन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थाईत्व को बढ़ावा देता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन गांव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थान अभ्यासकर्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनको देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट देखें–www.amefound.org

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सन् 1975 से काम कर रहा है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्धान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 30 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी०ई०ए०जी० ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा जेण्डर जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है।

माइजेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइजेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइजेरियर गरीबी और हानियों के विरूद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, चर्च आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। यह जानने के लिए कि स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में माइजेरियर किस प्रकार अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ काम कर रहा है। इसकी वेबसाइट देखें (www.misereor.de; www.misereor.org)

पोषण बागान : महिलाओं के नेतृत्व का रास्ता

जे0 कृष्णन

धर्मपुरी के वर्षा सिंचित क्षेत्रों में महिलाओं ने गृहवाटिका को अपनाया है, जिससे उनके परिवार को पोषण की उपलब्धता मिलने के साथ–साथ आमदनी भी हो रही है। सीमित मात्रा में उपलब्ध पानी के पुनर्चक्रीकरण के माध्यम से, इन महिलाओं ने दिखा दिया है कि पूरे वर्ष भर सब्ज़ियां उगाना संभव है।

जमीन के उद्धारक खेतिहर परिवार

पाण्डुरंगा हेगड़े

देश के छोटे मझोले किसानों के लिए केवल अकेला यह मॉडल कार्य नहीं कर रहा है बल्कि यहां पर मृदा और भूमि की विविधता पर आधारित बहुत से मॉडल हैं। खाद्य, चारा एवं औषधियों के उत्पादन के सन्दर्भ में विभिन्न अभ्यासों को अपनाते हुए छोटे किसानों ने अपनी जानकारियों एवं संस्कृति को समृद्ध किया है। छोटे किसान सिर्फ उपज के लिए कृषि नहीं करते, वरन् यह उनके जीवन का एक रास्ता भी है।

फसल विविधता के माध्यम से जलवायु परिवर्तन का सामना

ईश्वर काले और मार्सेला डिसूजा

किसानों के खेतों पर आनुवांशिक संसाधनों के संरक्षण एवं उपयोग करने में उनकी मदद करने हेतु नेपाल में एल.आई.बी.आई.आर.डी. समुदाय आधारित जैव विविधता प्रबन्धन माध्यम को अपनाते हुए किसानों के साथ काम कर रही है। आज नेपाल में 11000 से अधिक खेतिहर परिवार स्थानीय बीजों को पुनर्जीवित एवं संरक्षित करने में संलग्न है।

पर्यावरण की मांग : जैविक कृषि

रंजीत सिंह राघव, स्वप्निल दूबे, सुनील कैथवास

वर्ष दर वर्ष रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से न सिर्फ मानव एवं पशु, वरन् मृदा के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव के साथ पारिस्थितिकी संतुलन भी बिगड़ रहा है। ऐसे में विभिन्न जैव उर्वरकों के बारे में व्यापक जानकारी किसानों को लाभ पहुंचाने के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण में भी सहायक है।

अनुक्रमणिका

विशेष हिन्दी संस्करण, मार्च 2016

5 **पोषण बागान : महिलाओं के नेतृत्व का रास्ता**
जे0 कृष्णन

8 **जमीन के उद्धारक खेतिहर परिवार**
पाण्डुरंगा हेगड़े

11 **फसल विविधता के माध्यम से जलवायु परिवर्तन का सामना**
ईश्वर काले और मार्सेला डिसूजा

15 **पर्यावरण की मांग : जैविक कृषि**
रंजीत सिंह राघव, स्वप्निल दूबे, सुनील कैथवास

17 **स्थाई कृषि के माध्यम से गरीबी कम करना**
के0 सुब्रमण्यम, एस0 जस्टिन, टी0 जानसन एवं के0 विजयलक्ष्मी

स्थाई कृषि के माध्यम से गरीबी कम करना

के0 सुब्रमण्यम, एस0 जस्टिन,
टी0 जानसन एवं के0 विजयलक्ष्मी

छोटी जोत के किसानों के साथ संगठनों के त्रिस्तरीय मॉडल ने तमिलनाडु में बेहतर सेवाएं प्रदान की हैं। प्रत्येक स्तर पर संस्थागत स्पष्टता एवं उनके बीच जैविक जुड़ाव ने कृषि से जुड़े सामाजिक एवं आर्थिक दोनों मुद्दों को समझने में सहायता प्रदान की है। संसाधनों एवं सेवाओं तक पहुंच बढ़ने से किसान समृद्धि की ओर अग्रसर हुए हैं।

यह अंक...

छोटे खेतिहर परिवारों की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, खेती को बचाने में पारिवारिक खेती एवं महिलाओं की भूमिका को रेखांकित करता लीज़ा हिन्दी मार्च 2016 अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है।

श्री जे0 कृष्णन द्वारा लिखित पत्रिका का पहला लेख ''पोषण बागान : महिलाओं के नेतृत्व का रास्ता'' गृहवाटिका एवं उसके माध्यम से महिलाओं के नेतृत्व में परिवार की खाद्य व पोषण सुरक्षा को व्याख्यायित करता है तो दूसरा लेख ''जमीन के उद्धारक खेतिहर परिवार'' श्री पाण्डुरंगा हेगड़े द्वारा लिखित है। इस लेख में छोटी किसानी एवं पारिवारिक खेती को बढ़ावा देकर भूमि एवं खेती को बचाने की पहल का वर्णन है। श्री ईश्वर काले और श्री मार्सेला डिसूजा द्वारा लिखित 'फसल विविधता के माध्यम से जलवायु परिवर्तन का सामना' में जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से निपटने हेतु महाराष्ट्र जैसे सूखे प्रदेश में जल संरक्षण की विभिन्न विधियों को परियोजना के माध्यम से क्रियान्वित कर एक मॉडल प्रस्तुत किया गया है।

आज जबकि पर्यावरण के प्रति वैज्ञानिकों, किसानों सभी की चिन्ता है और रसायनों से लोगों का मोह भंग होता जा रहा है। ऐसे समय में डा0 रंजीत सिंह राघव, डा0 स्वप्निल दूबे, डा0 सुनील कैथवास द्वारा लिखित 'लेख पर्यावरण की मांग : जैविक कृषि'' सम–सामयिक है। स्थानीय स्तर पर कृषि संसाधनों की उपलब्धता, उत्पादों के लिए बाजार आदि से सम्बन्धित त्रिस्तरीय मॉडल को प्रस्तुत करता श्री के0 सुब्रमण्यम, श्री एस0 जस्टिन, श्री टी0 जानसन एवं सुश्री के0 विजयलक्ष्मी द्वारा लिखित स्थाई कृषि के माध्यम से गरीबी कम करना पत्रिका का पांचवा व अन्तिम लेख है।

अन्त में पत्रिका की उपयोगिता एवं उपयुक्तता पर आपके बेहतर सुझावों की प्रतीक्षा में...

• **सम्पादक मण्डल**

पोषण बागान
महिलाओं के नेतृत्व का रास्ता

जे० कृष्णन

धर्मपुरी के वर्षा सिंचित क्षेत्रों में महिलाओं ने गृहवाटिका को अपनाया है, जिससे उनके परिवार को पोषण की उपलब्धता मिलने के साथ–साथ आमदनी भी हो रही है। सीमित मात्रा में उपलब्ध पानी के पुनर्चक्रीकरण के माध्यम से, इन महिलाओं ने दिखा दिया है कि पूरे वर्ष भर सब्ज़ियां उगाना संभव है।

गृहवाटिका में अपशिष्ट जल का पुनर्चक्रीकरण

पूर्वी घाटों के पश्चिमी क्षेत्र में अवस्थित तमिलनाडु के धर्मपुरी जिले का पेन्नाग्राम तालुक अपनी भौगोलिक स्थितियों एवं उबड़–खाबड़ भूमि के कारण एक विशिष्ट स्थान रखता है। पहाड़ी इलाका होने के कारण निकट से ही बहती कावेरी नदी से जनपद को बहुत कम लाभ मिल पाता है। इस क्षेत्र में पानी का गंभीर संकट होने के कारण खेती के साथ ही अन्य दैनिक उपभोग भी प्रभावित होते हैं।

वर्षा सिंचित परिस्थितियों में मूंगफली मुख्य फसल के तौर पर उगायी जाती है जबकि सहफसल के रूप में चना एवं मटर की खेती की जाती है। ये फसलें न केवल किसानों के लिए आमदनी का एकमात्र जरिया हैं, वरन् परिवार एवं जानवरों के लिए प्रोटीन के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में भी हैं। तथापि, पिछले दो दशकों से किसान फसलों की निरन्तर बरबादी एवं उत्पादन लागत का बढ़ते जाना आदि चुनौतियों से जूझ रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप उपज एवं आमदनी दोनों में कमी आ रही है। साथ ही रसायनिक उर्वरकों के अन्धाधुन्ध प्रयोग के कारण न केवल मृदा स्वास्थ्य प्रभावित हो रही है, वरन् पूरे पारिस्थितिकी तन्त्र में भी ह्रास हो रहा है। इसके अतिरिक्त, एक वर्ष में अगर मानसून विफल हो जाता है तो किसानों के पास सांवा बोने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रहता, जो वर्षा सिंचित क्षेत्रों के लिए एक कठिन फसल होती है। विगत कुछ वर्षों के दौरान, मनुष्यों और जानवरों दोनों को ही प्रोटीन नहीं मिल रहा है पाने से वंचित रह जा रहे हैं।

इन स्थितियों से निपटने और पोषण स्रोतों तक खेतिहर परिवारों की पहुंच बढ़ाने में सहयोग करने के लिए, ए0एम0ई0 फाउण्डेशन ने पेन्नाग्राम तालुक के 20 गांवों में गृहवाटिका कार्यक्रम का क्रियान्वयन किया। इस कार्यक्रम में, धर्मपुरी फार्म के हस्तक्षेप के एक भाग के तौर पर, श्री वत्स राम फाउण्डेशन, चेन्नई ने सहयोग किया है।

शुरूआती प्रयास

एक त्वरित सहभागी अध्ययन (पी0आर0ए0) के माध्यम से वर्तमान जमीनी परिस्थिति को समझने के लिए एक सघन आकलन किया गया। वर्तमान स्थिति का आकलन करने और भावी विकास की संभावनाएं तलाशने के लिए बड़ी संख्या में किसान, विशेषकर महिला किसानों ने इसमें सहभागिता की। आकलन के दौरान मूंगफली की खेती को उन्नत करना कार्यक्रम की शुरूआत करने के लिए एक प्रारम्भिक बिन्दु के तौर पर देखा गया। अन्य गतिविधियों जैसे गृहवाटिका को प्रोत्साहन देना अगली गतिविधि के तौर पर रही।

शुरूआत में, 20 गांवों से लगभग 25 युवा महिलाओं को पारिस्थतिकी कृषिगत तरीके से मूंगफली की खेती करने के ऊपर सघन रूप से प्रशिक्षित किया गया। किसान विद्यालयों के दौरान सुगमीकरण की दक्षता बढ़ाने के लिए भी इन प्रशिक्षणों का उपयोग किया गया। ए0एम0ई0 के

गृहवाटिका में माहवार प्राप्ति

सब्ज़ी	उपज की मात्रा	पारिवारिक उपयोग के लिए	पड़ोसियों को दिया	बेची गई मात्रा	विक्रय से प्राप्त आमदनी	बचत (रूपये में)
सब्जी	15–25	5–6	1–2	10–15	150	200
मूली	10–15	5–8	1–2	5–8	200	200
जड़वाली सब्जी	10–15	3–5	1–2	4–5	100	200
चिचिण्डा	8–10	10	1–2	5	200	200
तरोई	5–8	2–3	1	2–3	100	200
करेला	25–30	10	1–2	10–15	400	200
टमाटर	15–25	5–6	1–2	10–15	200	200
भिण्डी	10–15	3–5	1–2	8–10	300	200
बैंगन	20–30	10	1–2	8–15	250	200
साग (4 प्रकार के)	60–70	30	0.5	50	300	200
कुम्हड़ा (4–5 प्रति पेड़)	5–10	5	1	5	200	200
गाजर					**2400**	**2100**
कुल						

कार्यकर्त्ताओं के साथ इन प्रशिक्षित महिलाओं ने सभी 20 गांवों में चलने वाले किसान विद्यालयों में सह सुगमीकरण का कार्य किया। लम्बे समय तक चलने वाले इन किसान विद्यालयों के माध्यम से लगभग 400 महिलाओं को स्थाई कृषिगत अभ्यासों को अपनाते हुए मूंगफली की खेती के ऊपर प्रशिक्षित किया गया।

गृहवाटिका की स्थापना

मूंगफली की अच्छी पैदावार के बाद, महिलाएं ऐसी और बहुत सी चीजों को जानने के प्रति उत्सुक हो गयीं, जो उनके परिवार को सहयोग प्रदान कर सके। इसी समय पोषण सुरक्षा को उन्नत बनाने के लिए गृहवाटिका के विचार को प्रस्तुत किया गया। विशेषकर उन दिनों में, जब वे महिलाएं कोई फसल नहीं उगा पाती हैं, उस समय गृहवाटिका में उगाई जाने वाली फसलों / पौधों के प्रति जानने के लिए वे काफी उत्सुक थीं। इसलिए पर्यावरण–सम्मत तरीकों को अपनाते हुए न्यून लागत गृहवाटिकाओं की स्थापना करने के विषय पर उनको प्रशिक्षित किया गया।

प्रारम्भ में, महिलाओं ने अपने घर के पिछवाड़े की जमीन पर 13 प्रकार की सब्ज़ियों के बीजों की बुवाई कर गृहवाटिका की स्थापना की (तालिका सं0 1)। उन्हें सब्ज़ियों और सागों की अच्छी पैदावार मिलने लगी, जिसका उपयोग उन्होंने घर के उपभोग के लिए किया। घरेलू उपयोग से जो थोड़ी–बहुत सब्ज़ियां व साग बच गयीं, उन्हें आस–पड़ोस में बांटा एवं कुछ स्थानीय बाजार

गृहवाटिका में साग

में बेचा भी। गृहवाटिका से रोज सब्ज़ियां निकलने के कारण अब उन्होंने बाजार से सब्ज़ियां खरीदनी बन्द कर दीं और इस प्रकार उन्होंने प्रत्येक माह लगभग रू0 2100 / – की बचत की। एक माह में, प्रत्येक परिवार ने अपनी गृहवाटिका से 6–9 किग्रा0 बैंगन, 7–9 किग्रा0 गोल लौकी, 10–14 किग्रा0 भिण्डी, 4–6 किग्रा0 लौकी की उपज प्राप्त की। इन महिलाओं ने उपज का लगभग 40 प्रतिशत बेचकर रू0 2000 / – से 2400 / – की आमदनी प्राप्त की। कार्यक्रम के एक भाग के तौर पर, लगभग 400 किसानों ने अपने घर में 100 से 150 वर्ग किमी0 परिक्षेत्र में गृहवाटिका की स्थापना की।

गृहवाटिका में शुरूआत तो अच्छी रही, लेकिन पानी की कमी झेलने के कारण महिलाएं इस गतिविधि को आगे नहीं बढ़ा सकीं। सब्ज़ियों की खेती भी वर्षा पर आधारित होती है और अच्छी वर्षा न होने के कारण गृहवाटिका प्रभावित हुई। इस समस्या से निपटने हेतु, महिलाओं ने रसोई से निकलने वाले जल को पुनः उपयोग करने की बात सोची। उन्होंने एक आकलन किया कि रसोई से प्रतिदिन लगभग 40–50 लीटर उपयोग किया गया पानी निकलता है। अतः इन्होंने रसोई से निकलने वाले पानी को बरबाद करने के बजाय उसे गृहवाटिका की तरफ मोड़ दिया। सीमित मात्रा में उपलब्ध संसाधनों का सबसे अच्छा उपयोग करने के लिए पानी को छानकर एक 50 लीटर क्षमता वाले ड्रम में डाल दिया। सब्ज़ियों के पौधों की जड़ों में सिंचाई करने के लिए ड्रम को ड्रिपरूट के साथ स्थापित कर दिया गया। इसके अलावा एक दूसरा नया तरीका भी अपनाया गया। बूंद विधि से लतादार सब्ज़ियों की सिंचाई के लिए एक छोटे पानी के बोतल का उपयोग किया गया। इन विधियों के उपयोग से, वाष्पीकरण एवं रिसाव के माध्यम से होने वाले जल के नुकसान को नियन्त्रित किया गया, ताकि पानी का पर्याप्त उपयोग हो सके। अब लगभग सभी खेतिहर परिवार सब्ज़ियां उगाने के लिए रसोई के पानी का पुनर्चक्रीकरण करने लगे हैं।

पुरूष और बच्चों सहित पूरा परिवार, अब गृहवाटिका में रूचि लेने लगा है। पुरूष जहां बाड़ बनाने, गृहवाटिका के लिए पानी लाने आदि का काम करते हैं वहीं महिलाएं पौधों के रख–रखाव एवं पौधों की सुरक्षा के लिए पीला जालीदार ट्रैप बनाने एवं पानी देने, फलों की तुड़ाई आदि के कामों में संलग्न रहती हैं। युवा बच्चे खाली समय में अपनी मां का सहयोग करते हैं।

लोगों के खाद्य उपभोग पद्धति में अब परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखने लगा है। परिवार के भोजन में अब विभिन्न प्रकार की सब्ज़ियां शामिल हो गयी हैं। इससे परिवार के लोगों के स्वास्थ्य का स्तर बेहतर हुआ है। महिलाओं का कहना है कि खाने में पत्तेदार सब्ज़ियों–सागों (फाइबर) की मात्रा बढ़ने से अब काफी दिनों से उन्हें अपच की समस्या नहीं झेलनी पड़ रही है।

शुरूआती दो वर्षों (2010–2011 व 2011–2012) में गृहवाटिका से सम्बन्धित गतिविधि गैर मौसमी महीनों अर्थात् जनवरी से जून के दौरान ही सम्पादित की गयी थी। अब महिलाएं इस गतिविधि को मुख्य फसली ऋतुओं में भी अपना रही हैं ताकि पूरे वर्ष भर सब्ज़ियों तक उनकी पहुंच सुनिश्चित हो सके।

सफलता का विस्तार

400 महिला किसानों की सफलता ने सभी गांवों में लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। 20 गांवों में लगभग 300–500 से अधिक परिवारों ने इस गतिविधि को अपनाया है।

बंगलौर में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक खेती वर्ष के उद्घाटन उत्सव के दौरान सब्जी उगाने पर अपनी जानकारियों के प्रदर्शनी का एक अवसर भी इन महिलाओं को मिला। इस उत्सव में महिलाओं ने अपनी गृहवाटिका में उगाई गयी विभिन्न प्रकार की सब्ज़ियों का प्रदर्शन किया और अपने अनुभवों का आदान–प्रदान किया।

इन महिलाओं के लिए, गृहवाटिका ने उनके परिवार को पोषण सुरक्षा प्रदान करने हेतु न केवल एक रास्ते का निर्माण किया है, वरन् पारिवारिक उपभोग के बाद बची सब्ज़ियों की बिक्री से महिलाओं को यथोचित आमदनी पाने में भी सहायता दी है। इसके साथ ही महिलाओं को 10–15 किमी0 दूर जाकर सब्ज़ियां खरीदने के कठिन श्रम से मुक्ति मिली है। सबसे महत्वपूर्ण तो यह है कि गृहवाटिका के माध्यम से आपसी आदान–प्रदान की प्रक्रिया मजबूत हुई है, सामाजिकता बढ़ी है। इस प्रकार गृहवाटिका परिवार एवं समाज के बीच जुड़ाव को मजबूती प्रदान करने का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

■

जे० कृष्णन
एफ०ए०ओ० प्रशिक्षित किसान विद्यालय सुगमीकर्ता
ए०एम०ई० फाउण्डेशन, नं० 5/1299–बी–2
एन०एस०सी०बी० रोड, टाम्स कालोनी के पीछे
लक्कियामपट्टी, धर्मपुरी– 636705
ई–मेल : josephkrish@rediffmail.com

Family farming and nutrition
LEISA INDIA, Vol. 16, No.4, Dec. 2014

जमीन के उद्धारक खेतिहर परिवार

पाण्डुरंगा हेगड़े

देश के छोटे मझोले किसानों के लिए केवल अकेला यह मॉडल कार्य नहीं कर रहा है बल्कि यहां पर मृदा और भूमि की विविधता पर आधारित बहुत से मॉडल हैं। खाद्य, चारा एवं औषधियों के उत्पादन के सन्दर्भ में विभिन्न अभ्यासों को अपनाते हुए छोटे किसानों ने अपनी जानकारियों एवं संस्कृति को समृद्ध किया है। छोटे किसान सिर्फ उपज के लिए कृषि नहीं करते, वरन् यह उनके जीवन का एक रास्ता भी है।

विश्व की बढ़ती जनसंख्या की मांगों को पूरा करने के लिए कौन खाद्य उत्पादित करता है? क्या यह बड़े क्षेत्रों पर एकल फसलों को उगाने वाली औद्योगिक कृषि है?आधुनिक कृषि विशेषज्ञों द्वारा यह कथन प्रचारित किया जा रहा है कि भूखे लोगों को खिलाने के लिए भोजन उत्पादित करने का एकमात्र रास्ता पारम्परिक कृषि है। जबकि इसके विपरीत, विश्व खाद्य संगठन के अनुसार, कम से कम 80 प्रतिशत खाद्य उत्पादन विश्व के गैर औद्योगिक छोटे खेतिहर परिवारों द्वारा किया जाता है। अफ्रीका में, कम से कम 90 प्रतिशत खाद्य उत्पादन छोटी जोतों से विशेषकर महिलाओं द्वारा किया जाता है।

यद्यपि कि पूरे विश्व में छोटी जोत के किसानों की संख्या भारत में सबसे अधिक है, फिर भी भूख और कुपोषण को कम करने के दिशा में उनके द्वारा दिये गये योगदान को शायद ही कभी मान्यता मिली हो। सबसे दिलचस्प बात तो यह है कि छोटी जोत के खेत लगभग सभी विविध पारिस्थितिकी क्षेत्रों में विद्यमान हैं। चाहे हिमालय के पहाड़ी क्षेत्र हों या केन्द्रीय मैदानों में जनजातीय भीतरी भाग हों अथवा पूर्व और पश्चिम में स्थित उष्ण कटिबन्धीय वन क्षेत्र हों, सभी स्थानों पर सदियों से छोटी जोत के खेत अस्तित्व में हैं, जो भूमि व मृदा की देख–भाल करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रत्येक क्षेत्र के लिए और प्रत्येक क्षेत्र के अन्दर, लोगों ने वहां की मृदा, जलवायु, खेती की विविधता एवं जंगली प्रजातियों की गहरी जानकारी के आधार पर खेती करने की कुछ विधाओं को विकसित किया है। इसी तरह, डक्कन के पठारों की प्रतिकूल जलवायु तथा पश्चिमी तट पर उष्ण कटिबन्धीय जंगलों के उच्च वर्षा वाले क्षेत्रों में बहु फसली खेती का अभ्यास किया गया है।

देश के छोटी जोत वाले किसानों के लिए यह अकेला मॉडल नहीं है, जो कार्य कर रहा है, वरन् मृदा व भूमि के विविधता के आधार पर ऐसे बहुत से माडल यहां मौजूद हैं। खाद्य, चारा एवं औषधियों के उत्पादन के सन्दर्भ में विभिन्न अभ्यासों को अपनाते हुए छोटे किसानों ने अपनी जानकारियों एवं संस्कृति को समृद्ध किया है। वास्तव में भारत में छोटी जोत के किसान 92 प्रतिशत हैं, जो कुल कृषित भूमि के 40 प्रतिशत भाग पर खेती करते हैं। छोटी जोत के किसानों के महत्व को **एक्शन एड** के रिपोर्ट में बखूबी रेखांकित किया गया है। रिपोर्ट में कहा गया है कि ''हमें छोटी जोत के किसानों का सहयोग करने की जरूरत है क्योंकि इससे एक तरफ तो महंगे कृषि रसायनों की आवश्यकता कम होने के कारण किसानों के पैसों की बचत होती है और ऐसी दशा में उन्हें ऋण लेने की आवश्यकता कम पड़ती है। साथ ही दूसरी तरफ अधिक विविधतापूर्ण फसलें उगाकर वे न सिर्फ पोषण की जरूरतें पूरी करते हैं, वरन् मौसमी दुर्घटनाओं तथा अधिक आर्द्रता वाली परिस्थितियों के प्रति सहनशील होने के कारण खाद्य आपूर्ति भी सुनिश्चित करते हैं। अतः छोटी जोत की किसानी में निवेश परम्परागत रूप से किये जाने वाले सघन रसायनिक खेती के बराबर या कभी–कभी उससे अपेक्षाकृत अधिक लाभप्रद सिद्ध होता है।''

कृषि : जीवन का एक रास्ता

छोटी जोत का किसान अपनी जमीन से उत्पन्न हुआ एक सांस्कृतिक तत्व है, जिसका अपनी जमीन से गहरा जुड़ाव होता है। उसकी सीखें जानकारी के माध्यम से

> ''छोटी जोत की किसानी में निवेश परम्परागत रूप से किये जाने वाले सघन रसायनिक खेती में निवेश के बराबर या कभी–कभी उससे अपेक्षाकृत अधिक लाभप्रद सिद्ध होता है।''
>
> एक्शन एड की रिपोर्ट

पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तान्तरण होती रहती हैं। सीखों के माध्यम से पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तान्तरित होने वाली यही जानकारियां उसे अधिक कठिन स्थितियों से निपटने के लिए रणनीतियां विकसित करना सिखाती हैं तथा मौसम, कीटों एवं बीमारियों के असर से निपटने के लिए आवश्यक कौशल भी प्रदान करती हैं।

छोटी जोत के किसान अपने परिवार एवं जानवर दोनों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विविध प्रकार की फसलें उगाने तथा मृदा उर्वरता बनाये रखने के लिए कड़ी मेहनत करते हैं और यह उनकी अपनी खुद की संस्कृति है। परिवार के अधिकांश सदस्य खेत पर काम करते हैं और निर्णय लेने में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। लघु किसानों का मिट्टी के साथ गहरा रिश्ता होता है और वे जमीन के मालिक होने के कारण भूमि का सिर्फ दोहन नहीं करते, वरन् उत्पादन लेने के साथ– साथ मृदा उर्वरता बढ़ाने का काम भी करते हैं। ठीक इसी प्रकार, जानवरों के साथ भी उनका अलग तरीके का सम्बन्ध होता है और खेत के हर पक्ष में उनको जीवन्तता दिखाई देती है। यह मानवीय तत्व एक दूसरे से प्रतिस्पर्धात्मक न होकर आपसी सहयोग की भावना पर आधारित होता है। लघु खेतिहर परिवारों के लिए जानवर सिर्फ मांस और दूध देने की एक मशीन न होकर परिवार का एक अंग होते हैं। समग्रता में एक साथ रहने का यह विचार तुरन्त अधिक उत्पादन लेने के उद्देश्य के विपरीत पर्यावरणीय नैतिकता के दीर्घकालिक स्थाईत्व पर आधारित है। एक लघु किसान सिर्फ उपज बढ़ाने वाले कृषिगत अभ्यासों को नहीं अपनाता, वरन् वह ऐसे अभ्यासों को अपनाता है, जो उसके जीवन को एक रास्ता प्रदान करते हैं ताकि वे अपने सम्पूर्ण परिवार एवं जानवर के लिए गुणवत्तापूर्ण खाद्य एवं चारा उपलब्ध करायें। यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि छोटी जोत के खेतिहर किसान एक ऐसे मरहम के समान हैं, जो भूमि की काया पलट कर देने का माद्दा रखते हैं।

छोटी जोत के किसानों के ये जीवन्त खेत अपने आप में एक उत्सव की तरह होते हैं जिन्हें आसानी से ग्रहण किया जा सकता है। खेत के किनारे–किनारे लगाये गये फलदार वृक्ष एक जीवित चहारदीवारी की तरह होते हैं और फसलों व सब्ज़ियों की विविधता तथा स्वस्थ जानवर खेत की सफलता को प्रदर्शित करते हैं। ज्यादातर मामलों में, किसान अपने ज्ञान, क्षमता, उत्पाद, अभ्यासों एवं देख–भाल के विचारों को साझा करने के लिए तैयार हैं। यही नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्य एक मजबूत तथा स्व–निर्मित समुदाय तैयार करने का आधार हैं।

छोटी जोत के खेतों की सफलता सिर्फ किसानों की व्यक्तिगत कार्यक्षमता पर ही आधारित नहीं होती, वरन् अन्य दूसरे संस्थागत कारकों पर निर्भर सामूहिक सांस्कृतिक अभ्यासों पर निर्भर करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में सामूहिक सम्पत्ति व संसाधनों जैसे चारागाह एवं जंगलों आदि के लिए इसी तरह का एक संगठन है। इसी प्रकार, एक अकेले व्यक्ति को बीजों से लाभ दिलाने के बजाय, जानकारियों के आदान–प्रदान के आधार पर औपचारिक बीज आदान–प्रदान एवं बीजों पर सामूहिक नियन्त्रण हेतु भी संगठन हैं, जो स्थानीय आवश्यकतानुसार बीजों का भण्डारण एवं उनके आदान–प्रदान करते हैं। आदान–प्रदान और देखभाल के ये मूल्य खाद्य उत्पादन के लिए एक सांस्कृतिक विशेषता के तौर पर स्वीकार्य है।

बिडम्बना ही है कि लघु किसानों के लिए अच्छे परिणाम देने वाले ये संगठन पिछले कुछ वर्षों में राज्य द्वारा प्रायोजित नीतियों और समाज में आये बदलावों के कारण नष्ट हो चुके हैं। अब सहयोग एवं सामुदायिक आदान–प्रदान के सांस्कृतिक मूल्य धीरे–धीरे खत्म हो रहे हैं और उनका स्थान अधिक मात्रा में उत्पादन लेने की लालची प्रवृत्ति वाले व्यक्तिगत दृष्टिकोण ले रहे हैं और इस कोशिश में गुणवत्ता का भी ख्याल नहीं रखा जा रहा है। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचने वाली समग्र जानकारियों एवं अनुभवों के बजाय कृषि प्रसार इकाईयों द्वारा आधी–अधूरी जानकारियां दी जा रही हैं। फसलों एवं दृष्टिकोणों की विविधता के बजाय अब लोगों का सारा जोर बाजार आधारित एकल खेती पर है। लोगों का एकमात्र उद्देश्य रसायनिक निवेशों का प्रयोग कर उपज बढ़ाना है।

पारिवारिक कृषि के ऊपर नकारात्मक प्रभाव डालतीं नीतियां

छोटी जोत की कृषि से सम्बन्धित अधिकांश नीतियां मुख्य रूप से अनाज (धान या गेंहूं) उत्पादन पर केन्द्रित होने के साथ बड़े एवं मध्यम किसानों के पक्ष में हैं। अपने ही खेत से प्राप्त अपशिष्टों से तैयार खाद का उपयोग कर विविध प्रकार की फसलें उगाने वाले छोटी जोत के किसानों के लिए अनुदान का कोई मानदण्ड नहीं है जबकि इनकी गतिविधियां पारिस्थितिक सिद्धान्तों पर आधारित होती हैं और जीवाश्म ईंधनों पर इनकी निर्भरता नहीं होती या अति न्यून होती है।

खाद्य सुरक्षा के नाम पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से चावल एवं गेंहूं का वितरण किया जाना छोटी जोत के किसानों के सामने एक बड़ी चुनौती है। हजारों किमी0 दूर उत्पादित इन अनाजों को लाया जाता है और लघु किसानों को इस बात के लिए मजबूर किया जा रहा है कि वे अपने खाद्य उत्पादन के साथ ही विभिन्न फसलों जैसे मोटे अनाजों बाजरा, टांगुन, सांवा आदि पर आधारित

अपनी स्थानीय खाद्य संस्कृति को छोड़ दें। सार्वजनिक वितरण प्रणाली को विकेन्द्रित करने के बजाय आस–पास के गांवों में छोटी जोत वाले किसानों द्वारा स्थानीय खाद्य उत्पाद को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

ग्रामीण स्तर पर रोजगार उपलब्ध कराने वाले एक अन्य दूसरे राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रम का भी छोटी जोत के खेतिहर परिवारों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। इस कार्यक्रम की वजह से कृषिगत क्रियाओं के लिए मजदूरी की दर में तेजी से इजाफा हुआ है और छोटे किसानों को प्रमुख कृषिगत गतिविधियों – रोपाई, निराई अथवा कटाई के लिए अधिक मूल्य चुकाना पड़ रहा है। इस प्रकार अधिक श्रम मूल्य चुकाने में असमर्थ होने के कारण ये छोटे किसान या तो कम श्रमसाध्य फसलें बोने की ओर उन्मुख हो रहे हैं, या फिर खेती छोड़ने को विवश हो रहे हैं। तथापि, कुछ निश्चित परिवर्तनों को अपनाकर छोटे किसानों को जीवित रहने के प्रति आश्वस्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, नरेगा में छोटी जोत के खेतिहर परिवारों की कृषिगत क्रियाओं के लिए सहयोग के प्रावधान को जोड़ा जा सकता है।

पारिवारिक कृषि का भविष्य

दुर्भाग्य से, इन सभी गुणों के बावजूद पारिवारिक कृषि उपेक्षित होती जा रही है और इसके महत्व को कोई मान्यता नहीं मिल रही है। ऊपर से, कम लाभ मिलने के कारण छोटी जोत के किसान भी खेती छोड़ने पर मजबरू हो रहे हैं। नई पीढ़ी के किसानों के अन्दर मृदा एवं अन्य संसाधनों की देख–रेख करने की क्षमता एवं आवश्यक अनुभव न होने के कारण उनके ऊपर सबसे विनाशकारी प्रभाव पड़ रहा है। यह क्षमता और अनुभव न्यूनीकरण के सिद्धान्तों पर आधारित कृषि विद्यालयों के खण्डित ज्ञान के शैक्षणिक शिक्षा से हासिल नहीं किया जा सकता है। यह सिर्फ क्षमता बनाने की बात नहीं है, वरन् सीखने की संस्कृति है, जिसके लिए निरन्तर ध्यान देने तथा जमीन से गहरे तक जुड़ाव होना चाहिए और नई पीढ़ी में इसी बात की सबसे बड़ी कमी है। जमीनों से जुड़ाव न होने के कारण वे खेती, विशेषकर छोटी जोत की खेती को एक वांछनीय व्यवसाय के रूप में नहीं देखते हैं।

छोटे जोत के किसानों द्वारा झेली जा रही इन चुनौतियों से निपटने के लिए, हमें नीतिगत स्तर पर हस्तक्षेप करने हेतु एक ऐसी बहुआयामी रणनीति की आवश्यकता है, जो उन्हें एक बेहतर आजीविका के प्रति आश्वस्त कर सके। छोटी जोत के खेत से निकले अपशिष्टों से तैयार खाद का प्रयोग कर कार्बन उत्सर्जन कम करने, फसल विविधता को बनाये रखने तथा पर्यावरण पर बहुत कम प्रभाव डालते हुए गुणवत्तापूर्ण खाद्य उत्पादन की दिशा में किसानों द्वारा किये जा रहे योगदानों को मान्यता दिये जाने की आवश्यकता है। आधुनिक समय में कृषि और स्वास्थ्य में आने वाले संकटों के समाधान का एकमात्र रास्ता लघु किसानों को मजबूत करने के लिए स्थाई प्रयासों में निहित है।

सन्दर्भ

एक्शन एड, उपजाऊ मैदानः सरकारें एवं दानदाता लघु किसानों का सहयोग कर किस प्रकार भूख को आधा कर सकते हैं, 2010

सुखपाल सिंह एवं श्रुति भोगल, पंजाब के लघु किसान : सम्पन्न या बिगड़े हुए? इकोनॉमिक एवं पॉलिटिकल वीकली : वाल्यूम 26–27, 2014

ग्रेन, जमीन के लिए भूख : सभी कृषि भूमि के एक चौथाई से भी कम पर लघु किसानों का भोजन, मई, 2014

■

पाण्डुरंगा हेगडे
बासवराज निलाया
चौकीमठ
सिरसी
उत्तरी कनारा– 581401
ई–मेल : appiko@gmail.com

Family farmers and sustainable landscape
LEISA INDIA, Vol. 16, No.3, Sept. 2014

फोटो : योगेश शिन्दे, डब्ल्यू ओ टी आर

2012 की गर्मियों में अपने अनार के खेत को दिखाता किसान

फसल विविधता के माध्यम से जलवायु परिवर्तन का सामना

ईश्वर काले और मार्सेला डिसूजा

आज जबकि प्रत्येक स्थान पर किसान बदलती कृषि–जलवायुविक परिस्थितियों से निपटने के लिए संघर्ष कर रहे हैं, महाराष्ट्र के कुम्भरवाडी गांव के कुछ किसान अपनी फसल प्रणाली में विविधता लाकर इससे अनुकूलन स्थापित कर रहे हैं। विविधीकृत फसल प्रणाली न केवल जलवायु और बाजार के जोखिमों को कम कर रही है, वरन् इससे परिवार के सदस्यों को विभिन्न प्रकार के व पोषक खाद्य भी उपलब्ध हो रहे हैं।

हाल के कुछ वर्षों में किसानों को मौसम की अनिश्चितता में अत्यधिक तेजी का सामना करना पड़ रहा है। यह हमारे सामने देर से और असमय वर्षा, बाढ़, तापमान में वृद्धि आदि विविध रूपों में प्रदर्शित हो रही है, परिणामतः फसल का नुकसान हो रहा है। उदाहरण के लिए, अहमदनगर जिले के अकोले विकास खण्ड के गांवों में नवम्बर, 2010 में अत्यधिक वर्षा हुई, जिसके कारण रबी ऋतु की बुवाई एक तो देर से हुई, दूसरे देर से हुई अत्यधिक वर्षा के कारण रबी ऋतु में बोयी गयी गेंहूं एवं चना की अधिकांश फसलें जल–जमाव के कारण बरबाद हो गयीं। दिसम्बर माह में इन फसलों की पुनः बुवाई की गयी, परन्तु रबी ऋतु में होने वाली फसलों की उपज में 50 प्रतिशत की गिरावट आयी। ठीक इसी प्रकार, वर्ष 2011 में मई के आखिरी सप्ताह में भारी वर्षा होने के कारण बाजरे और मूंगफली की बुवाई पर विपरीत प्रभाव पड़ा, जिस वजह से उपज में लगभग 50 प्रतिशत की कमी आयी। पुनः 9 फरवरी, 2012 को बेमौसम पाला पड़ जाने के कारण मूंगफली के बीजों का अंकुरण समय से पहले ही हो गया, नतीजतन फसल को व्यापक नुकसान पहुंचा।

वर्ष 1996–2001 के दौरान, वाटरशेड आर्गनाइजेशन ट्रस्ट नामक एक स्वैच्छिक संगठन ने महाराष्ट्र के कुम्भरवाडी नामक गांव के साथ–साथ अन्य और बहुत से भागों में इण्डो–जर्मन वाटरशेड कार्यक्रम का क्रियान्वयन किया। वाटरशेड विकास परियोजना पूर्ण होने के बाद वर्ष 2012 में उक्त संगठन ने वनस्पतियों एवं फसलों की पद्धति का आकलन करने के लिए गांवों में जी0आई0एस0 आधारित एक अध्ययन किया। वर्ष में कम वर्षा होने के बावजूद, फसलों में विविधता दिखी। इसने संगठन को गांवों में फसल विविधीकरण के कारणों को समझते हुए उसे आगे

सिद्ध करने के लिए उत्साहित किया। हमने विभिन्न अवधि में गांव में फसलों का आंकड़ा लेने के लिए तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग कर तीन चरणों– 1996 (वाटरशेड विकास परियोजना से पहले), 2011 एवं 2012 में फसल आंकड़ों को तालिकाबद्ध किया।

वर्ष 2012 में फसलों में उच्च विविधीकरण को जानने के लिए हमने सर्वेक्षण पद्धति को अपनाया। सर्वेक्षण में, हमने उन किसानों को शामिल किया, जो नगदी फसलों, औद्यानिक फसलों, चारा फसलों एवं सब्ज़ियों की खेती सघनता से करने लगे थे। दलहनों एवं खाद्य अनाजों की खेती में हो रहे परिवर्तनों को समझने के लिए हमने नमूना हेतु चुने गये कुछ प्रतिनिधि किसानों को भी शामिल किया। इसके साथ ही फसल पद्धति में हो रहे बदलावों पर उनके समझ एवं अनुभवों को जानने के लिए किसानों के साथ समूह चर्चा भी आयोजित की गयी।

जल संरक्षण से फसल विविधता

कुम्भरवाडी गांव पश्चिमी महाराष्ट्र में अहमदनगर जिले के संगमनेर तालुक में जिला मुख्यालय से 45 किमी0 दक्षिण–पश्चिम में अवस्थित है। गांव में कुल 145 घर हैं, जो विभिन्न टोलों में बंटे हुए हैं। यद्यपि कि गांव के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है, फिर भी गांव के बहुत से परिवार दुग्ध व्यवसाय से जुड़े हुए हैं। इसलिए पशुपालन, विशेषकर संकर नस्ल की गायों का पालन यहां पर मुख्य सहायक पेशा है। कुम्भरवाडी औसतन 500 मिमी0 वार्षिक वर्षा के साथ महाराष्ट्र का वर्षा की कमी से जूझने वाला सूखाग्रस्त क्षेत्र है।

वर्ष 1996 में इण्डो–जर्मन वाटरशेड विकास कार्यक्रम के क्रियान्वयन से पहले इस गांव में मुख्य तौर पर दो फसलें होती थीं – खरीफ में बाजरा और रबी में ज्वार। थोड़े क्षेत्र में मोथ सेम, मूंग, चना एवं चारे के लिए गन्ने की खेती भी होती थी। वर्षा आधारित स्थितियों में कुल 325.5 हेक्टेयर क्षेत्र में खेती होती थी, जबकि एक बड़ा क्षेत्र (66 हेक्टेयर) परती पड़ा रह जाता था। खरीफ ऋतु में 168 हेक्टेयर पर बाजरा एवं रबी ऋतु में 149 हेक्टेयर पर ज्वार की खेती के साथ ये दोनों यहां की मुख्य फसलें थी। ये फसलें परिवार की खाद्य एवं चारा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उगायी जाती थीं। यहां पर गेंहूं की खेती नहीं होती थीं।

वाटरशेड विकास के बाद, 2002 से यहां जलस्तर लगातार बढ़ने के कारण किसानों ने नगदी फसलों जैसे गेंहूं, टमाटर और प्याज आदि की खेती करना प्रारम्भ कर दिया है। अध्ययन के दौरान पाया कि वर्ष 2011 में वर्षा लगभग सामान्य रही और खरीफ की बुवाई के समय जून के प्रथम व द्वितीय सप्ताह में तथा रबी की बुवाई के समय मध्य सितम्बर में अच्छी बारिश हुई।

> कम वर्षा होने के बावजूद, कुम्भरवाडी के किसान 24 प्रकार की फसलें लेने में सक्षम हुए

अच्छी मात्रा में बारिश होने की वजह से इस वर्ष 414.75 हेक्टेयर परिक्षेत्र में खेती की गयी। किसानों ने 15 विविध फसलों की खेती की। खरीफ में 40 हेक्टेयर पर बाजरा की खेती के साथ प्याज, टमाटर और सोया की खेती भी बड़े परिक्षेत्र में की गयी, जबकि रबी ऋतु में गेंहूं व बाजरा की खेती क्रमशः 80 व 60 हेक्टेयर में की गयी और प्याज एवं टमाटर मुख्य फसलें रहीं। गर्मियों में, किसानों ने 10 हेक्टेयर में टमाटर एवं 25 हेक्टेयर में चारा की खेती की। इनके अतिरिक्त, तीनों ऋतुओं में किसानों ने लगभग 4 प्रजातियों की दलहनों एवं कुछ सब्ज़ियों को उगाया। एक किसान दम्पती ने अनार की खेती करना भी प्रारम्भ कर दिया।

कम वर्षा परिस्थितियों से अनुकूलन

वर्ष 2011 में हुई 450 मिमी0 वर्षा की अपेक्षा वर्ष 2012 में मात्र 287 मिमी0 वर्षा ही हुई। इसके साथ ही वर्षा के दिनों में भी कमी आयी। वर्ष 2011 में 86 दिनों के मुकाबले वर्ष 2012 में मात्र 60 दिन ही वर्षा हुई और एक से दूसरी वर्षा के दिनों के बीच में भी लम्बा अन्तराल रहा। वर्ष 2012 में अच्छी वर्षा के इन्तजार में जुलाई प्रथम सप्ताह में बारिश होने के कारण खरीफ की बुवाई देर से हुई। परिणामतः रबी की बुवाई में भी देरी हुई। रबी की बुवाई सितम्बर अन्त व अक्टूबर हेतु प्रथम सप्ताह में हुई।

वर्षा पद्धति में बदलाव आने के कारण किसानों के फसल चयन किसनों की प्रतिक्रिया भी अलग थी। कम वर्षा होने के बावजूद, अभी भी किसान अधिक संख्या में फसलें उगाने में सक्षम थे। कृषित भूमि का क्षेत्रफल कम होकर 318 हेक्टेयर हो गया, परन्तु किसानों ने सभी तीन ऋतुओं में लगभग 24 प्रकार की फसलों की सघन खेती की। इनमें मोटा अनाज, दलहन, सब्ज़ियां, चारा, फलदार वृक्ष एवं यहां तक कि कपास एवं सनई की फसलें भी शामिल थीं। ज्वार की खेती 142 हेक्टेयर में की गयी, जो वर्ष 2011 से लगभग दुगुना क्षेत्रफल था।

खरीफ 2012 में, कम बारिश और कमजोर मानसून के कारण किसानों ने वर्ष 2012 की तुलना में दुगुने परिक्षेत्र में बाजरा की खेती की। आमदनी के साथ परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अब वे बाजरा के साथ थोड़ी मात्रा में मोथ सेम, मूंग, सोया, टमाटर और हरा मटर भी उगा रहे हैं। किसानों ने फसल चक्र प्रणाली के माध्यम से मूंग को सहयोगी फसल के रूप में शामिल किया

और इसके लिए उन्होंने बताया कि ''खरीफ में इसे अपनाने पर रबी में ज्वार फसल के उत्पादन में बेहतर बढ़त मिलती है।'' दो किसानों ने कपास और सनई उगाने के साथ यह प्रयोग किया। एक किसान द्वारा मृदा में जल धारण क्षमता को बढ़ाने के लिए हरी खाद के रूप में सनई की खेती की गयी। उसने अपने अनुभवों से बताया कि समय से बारिश न होने के कारण सनई के पौधे खेत में पलटाई के लिए तैयार नहीं थे, इसलिए उसने इन्हें बीज के लिए उगा लिया।

वर्ष 2012 के रबी ऋतु में, कम पानी उपलब्धता के कारण ज्वार की खेती सिर्फ अपने परिवार की आवश्यकता पूर्ति के लिए की गयी। वर्ष 2012 में ज्वार ने लोगों को मुख्य भोजन एवं उनके पशुओं के लिए चारे की उपलब्धता सुनिश्चित कराई। किसान कहते हैं – ''फकत एक पौस पडला तारी ज्वारछे पिक हमखास, आनी जार पौस नहीच पडला तारी जानवरना चारा होतोच'' अर्थात् यदि बुवाई के तुरन्त बाद सिर्फ एक बारिश हो जाती है तो ज्वार की कुछ उपज मिल जायेगी। यदि बारिश नहीं होती है या बाद में होती है तो उपज तो बहुत ही कम होगी, परन्तु इससे चारा की उपलब्धता हो जायेगी। फसल अवशषों के लिए अच्छा बाजार भी है। गेंहूं के किसानों ने अपने अनुभवों को साझा करते हुए कहा कि '' पाण्याची एक पाली जारी कामी पडाली गेव्हचे पिक हताचे जाते'' अर्थात् यदि हम एक बार भी सिंचाई नहीं करते हैं तो गेंहूं की उपज बुरी तरह से प्रभावित होती है। तापमान में हल्का परिवर्तन भी गेंहूं की उत्पादकता को प्रभावित करता है।

किसानों ने अधिक पानी चाहने वाली फसलों टमाटर और प्याज की खेती करनी बहुत कम कर दी और इनके स्थान पर दलहन एवं तिलहन की खेती के साथ–साथ ज्वार की खेती का क्षेत्रफल बढ़ाया। उनका कहना है कि अरहर की फसल कम पानी चाहने वाली और बाजार में अच्छा मूल्य देने वाली है साथ ही इसके अवशेषों का उपयोग चारे के रूप में हो जाता है। कुछ किसान यह भी कहते हैं कि तापमान बढ़ने से अरहर की फसल को लाभ पहुंचता है, क्योंकि उस समय कीटों का आक्रमण फसल पर बहुत कम होता है। कम पानी चाहने वाली काबुली चने की खेती सिर्फ घरेलू उपयोग के लिए मात्र 8 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर की गयी। जहां गेंहूं की फसल में 7–8 पानी की आवश्यकता होती है, वहीं काबुली चना मात्र 1–2 पानी में ही गेहूं के बराबर उपज देती है। सब्ज़ियों की कुछ फसलों जैसे – बन्दगोभी, भिण्डी और मिर्चा के अतिरिक्त न्यून मात्रा में प्याज व टमाटर की खेती छोटे अनुपात में की गयी, जिन्हें घर पर उपयोग के अलावा बाजार में भी बेचा गया।

प्रगतिशील किसानों के एक जोड़े ने गर्मियों की फसलों से अत्यधिक लाभ प्राप्त किया। जिससे प्रभावित होकर कुछ दूसरे किसानों ने उनका अनुसरण किया। मक्के की खेती अप्रत्याशित रूप से 10 हेक्टेयर से बढ़कर 23 हेक्टेयर हो गयी। वाटरशेड विकास परियोजना शुरू करने से पहले इस क्षेत्र से पूरी तरह से गायब औद्यानिक खेती को अब लोगों ने अपनाना प्रारम्भ कर दिया है। वर्ष 2012 में कम बारिश होने के बावजूद अनार की खेती का परिक्षेत्र बढ़कर 10 हेक्टेयर हो गया। इसकी वृद्धि का कारण बाजार में इसकी बढ़ती मांग के साथ ही कम पानी की फसल के कारण बूंद सिंचाई भी हो जाती थी और यह अधिक तापमान सहनशील भी थी। इसके अतिरिक्त, अन्य फसलों की तुलना में अनार की खेती में कम श्रम की आवश्यकता होती है, जो किसानों के लिए अधिक महत्वपूर्ण था। 0.33 हेक्टेयर में आम का पौधरोपण किया गया। औद्यानिक और गर्मियों की खेती करने वाले 3 किसानों ने अनार के पौधों से फल प्राप्त करने के लिए वर्ष 2012 में मार्च–मई के दौरान 50 टैंकर पानी लेने के लिए कुल 80,000.00 रू0 का निवेश किया।

गांव में संकर नस्ल के गायों की संख्या 156 के लगभग है, जिनसे प्रतिदिन औसतन 500 लीटर दूध का उत्पादन होता है। इस गर्मी में, सूखा पड़ने के कारण दूध का उत्पादन घट कर 350 लीटर प्रति के प्रतिदिन करीब रह गया। किसानों का मानना है कि तापमान में अत्यधिक वृद्धि के कारण दूध का उत्पादन घटा है। इस कारण वे गायों को ठण्डा रखने के लिए अधिक बार नहलाते थे, जिससे दूध का उत्पादन बढ़ाने में सहायता मिली। पशुओं की हरे चारे की आवश्यकता को पूरा करने के लिए कम पानी चाहने वाली मक्का और बाजरे की एक स्थानीय प्रजाति कादवाल की खेती की गयी। किसानों ने पशुओं को गन्ना और गाजर की डण्ठलों को खिलाना भी प्रारम्भ कर दिया है, क्योंकि उनका मानना है कि इससे दूध उत्पादन में वृद्धि होती है।

विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करती जैव विविधता

उत्पादन में अनिश्चितता के को ध्यान में रखते हुए घरेलू खाद्य सुरक्षा को वरीयता दी गयी। अनाज की खेती करने वाले सभी किसानों ने इसे पूरी तरह घर के लिए उपयोग किया। जबकि दलहन जैसे अरहर और मोथ सेम की खेती करने वाले किसानों ने घर की जरूरतों से अधिक होने पर थोड़ी मात्रा में उपज को बेच भी लिया। सोयाबीन की खेती सिर्फ बाजार के लिए की गयी, जबकि मूंगफली को पूर्णतया घर में उपयोग किया गया।

घरेलू उपभोग एवं बाजार के लिए उत्पादों का वितरण

फसल	किसान संख्या	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	कुल उत्पादन (किग्रा में)	घरेलू उपभोग एवं बीज के लिए रखना (किग्रा० में)	बाजार में बिक्री (किगा० में)
अनाज					
बजरी	13	1.58	5800	5800	0
बाजरा	14	2.04	440	440	0
गेहूँ	5	0.88	400	400	0
दलहन एवं तिलहन					
मोथ सेम	4	0.60	25	25	0
मूंग	5	0.50	400	200	200
सोयाबीन	1	0.10	80	0	80
अरहर	18	3.63	3370	860	2510
मूंगफली	3	1.45	200	200	0
चना	5	1.09	175	175	0
नगदी फसलें एवं सब्ज़ियाँ					
बन्दगोभी	1	0.29	100	10	90
भिण्डी	4	0.10	200	5	195
प्याज	11	1.83	2100	340	1760
टमाटर	10	2.33	44400	100	44300
साग	3	0.40	125	0	125
मिर्चा	9	0.90	310	60	250
कपास	5	0.89	1280	0	1280
सनई	1	0.19	400	25	375

वर्ष 2012 में सब्ज़ियों या खाने योग्य नगदी फसलों की खेती करने वाले किसानों ने घरेलू उपभोग के लिए उपज को पर्याप्त मात्रा में रख लिया था। सनई के बीजों की बिक्री से कुछ आय भी प्राप्त हुई। जिन किसानों ने प्रायोगिक आधार पर कपास की खेती की थी, उन्होंने प्रति कुन्तल रू0 4000.00 की आय प्राप्त की। इस प्रकार इस सूखे वर्ष में फसलों की विविधता से न केवल किसानों की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा सुनिश्चित हुई, वरन् गांव के लोगों की आय भी बढ़ी। (तालिका सं0 1 देखें)

निष्कर्ष

वाटरशेड विकास परियोजना के बाद जल की कमी वाले इस क्षेत्र में जल की उपलब्धता रहने लगी है, जिससे किसानों के अन्दर आत्मविश्वास का संचार हुआ है और वे अपनी विभिन्न आवश्यकता को पूरा करने के लिए संसाधनों का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग कर प्रयोग करने हेतु उत्साहित हो रहे हैं। सूखा वर्ष के दौरान भी, किसान पारम्परिक फसलों की ओर वापस मुड़े हैं। किसानों ने खाद्य सुरक्षा एवं चारा सहित घर की आवश्यकताओं को वरीयता देने के साथ–साथ आय अर्जन पर भी ध्यान दिया है।

जल उपलब्धता एवं भूमि की उत्पादकता बढ़ाने के साथ वाटरशेड विकास ने किसानों की जोखिम लेने की क्षमता को बढ़ाने में भी योगदान दिया है। कुम्भरवाडी के किसानों ने सीखने एवं प्रयोग करने के प्रति उत्सुकता दिखाई और यहां तक कि सूखे वर्ष में भी निर्णय लेकर अपनी क्षमता का परिचय दिया। ऐसे समय में जबकि कृषि सलाहकारों द्वारा स्थाई कृषि के तरीकों में दिशा–निर्देश प्रदान किया जा रहा है। इस परियोजना ने किसानों को चरम मौसमी उतार–चढ़ावों का सामना करने के अनुकूल बनाने तथा जलवायु परिवर्तन को अपनाने के लिए तैयार करने में बेहतर योगदान दिया है।

आभार

हम कुम्भरवाडी के किसानों का धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर अपने अनुभवों एवं अवलोकनों को हमारे साथ साझा किया। इस अध्ययन में विशिष्ट योगदान देने के लिए हम अपने सहयोगियों योगेश शिन्दे, अदिति देवधर, विनीत रास्कर एवं थामस पडगलमाल का धन्यवाद देते हैं। इसके साथ ही इस अध्ययन के लिए सहयोग देने हेतु हम विकास एवं निगम के लिए स्विस अभिकरण का भी आभार प्रकट करते हैं।

■

ईश्वर काले
वरिष्ठ शोधार्थी
वाटरशेड आर्गनाइजेशन ट्रस्ट (डब्ल्यू ओ०टी०आर) पूणे और डाक्टोरल छात्र
टाटा इन्स्टीच्यूट आफ सोशल साइन्सेज, मुम्बई
ई–मेल : eshwer.kale@wotr.org.in
डा० मार्सेला डिसूजा
कार्यकारी निदेशक
वाटरशेड आर्गनाइजेशन ट्रस्ट (डब्ल्यू ओ०टी०आर)
ई–मेल : exec.director@wotr.org

Cultivating farm biodiversity
LEISA INDIA, Vol. 16, No.1, March 2014

पर्यावरण की मांग : जैविक कृषि

रंजीत सिंह राघव, स्वप्निल दूबे, सुनील कैथवास

वर्ष दर वर्ष रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से न सिर्फ मानव एवं पशु, वरन् मृदा के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव के साथ पारिस्थितिकी संतुलन भी बिगड़ रहा है। ऐसे में विभिन्न जैव उर्वरकों के बारे में व्यापक जानकारी किसानों को लाभ पहुंचाने के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण में भी सहायक है।

हमारे देश में खाद्यान्न की उपज बढ़ाने के लिए पिछले कई दशकों से रसायनिक उर्वरकों का अधिक प्रयोग किया जा रहा है। आंकड़े बताते है कि सन् 1950–51 में 0.07 मिलियन टन रसायनिक उर्वरक की खपत थी, जो 2000–2001 में बढ़कर 16.71 मिलियन टन हो गयी। इसका सीधा अर्थ है कि रसायनिक उर्वरकों का प्रयोग 1 किग्रा0 से 96 किग्रा0 / हेक्टेयर / वर्ष बढ़ा व लम्बे शोधों से यह सिद्ध हुआ कि रसायनिक उर्वरकों के लगातार प्रयोग से मृदा उर्वरा शक्ति के ह्रास के साथ ही फसल उत्पादन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। रसायनों के अनियमित एवं अत्यधिक प्रयोग से किसानों की आर्थिक स्थिति के साथ–साथ पर्यावरण को भी नुकसान पहुचा है। कीट एवं कवकनाशी जो पादपों में कीट एवं रोग की रोकथाम के लिए प्रयोग किये जाते हैं मृदा पारिस्थितिकी के साथ–साथ पानी के स्रोतो एवं अन्य जीव जंतुओं के स्वास्थ्य को बुरी तरह प्रभावित करते हैं।

सतत् कृषि पद्धति, समेकित कीट पादप प्रबंधन तथा समेकित पादप पोषक प्रबंधन में जैव उर्वरकों की प्रमुख भूमिका है। जैव उर्वरक फसलों को पोषण देने के साथ पर्यावरण मित्र भी हैं। इनके उपयोग से किसी प्रकार का प्रदूषण नहीं फैलता। अनेक प्रकार के सूक्ष्मजीव विशेषकर जीवाणु पौधों की जड़ों एवं उनके आस–पास के निवास क्षेत्र से सहजीवी प्रकार की सम्बद्धता स्थापित कर लेते हैं। ये पौधों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लाभ पहुंचाते हैं।

पौधो की जड़ों या मृदा में रहने वाले ये सूक्ष्म जीव वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को स्वतन्त्र रूप से या दलहनी फसलों की जड़ों में पाये जाने वाले जीवाणुओं द्वारा यौगिकीकरण कर पौधों को नाइट्रोजन उपलब्ध कराते हैं। पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले कुछ जीवाणु जैसे राइजोबियम, स्यूडोमोनास व ऐजोटोबैक्टर आदि वृद्धि हॉर्मोन जैसे इन्डोल एसिटिक एसिड साइटोक्राइनिन आदि का स्राव कर पौधों की वृद्धि में सहायता करते हैं। इसके अलावा इनमें से कुछ जीवाणु मिट्टी में उपस्थित अविलेयकारी फास्फेट को विलेयकारी कार्बनिक फास्फेट में बदल कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। ये जीवाणु कम आण्विक भार वाले यौगिक साइड्रोफोर का भी स्राव करते हैं जोकि एक आयरन चिलेटिंग (लौह अवशोषक) पदार्थ है। ऐसा करके जीवाणु हानिकारक पादप रोगजनक कवकों को समाप्त कर पौधों की रक्षा करते हैं।

जैव उर्वरक

यहां हम कुछ ऐसे जैवरकों की बात करेंगे, जिनके उपयोग से छोटे–मझोले किसान समेकित पोषक प्रबंधन करते हुए कम लागत में अधिक पैदावार ले सकते हैं।

राइजोवियम जैव उर्वरक

राइजोबियम कल्चर सर्वाधिक प्रयोग होने वाले जैव उर्वरक हैं। राइजोबियम सूक्ष्म जीवाणु दलहनी फसलों की जड़ों की गांठों के जीवाणु हैं जो अपना पोषण पौधे के सहयोग से प्राप्त करते हैं और वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को मिट्टी में जमा कर देते हैं। यह क्रियाविधि सहजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण कहलाती है। भारत में दलहनी फसलों द्वारा 50 से 150 किग्रा0 / हेक्टेयर तक नाइट्रोजन वायु से ग्रहण करके मृदा में जमा की जाती है। सनई व लोबिया द्वारा लगभग 90 किग्रा0, रिजका व बरसीम द्वारा 120 किग्रा0, अरहर द्वारा 40 किग्रा0, मटर व चने द्वारा 80–100 किग्रा0, सोयाबीन से 60–100 किग्रा0, सेम व मूंगफली से 40–60 किग्रा0 तक नाइट्रोजन / हेक्टेयर / वर्ष स्थिर हो सकती है। कल्चर मिलाने के फलस्वरूप मृदा नाइट्रोजन में 15–20 प्रतिशत तक वृद्धि संभव है।

एजोटोवैक्टर जैव उर्वरक

एजोटोवैक्टर मृदा में पाया जाने वाला एजोटी–वैक्टीरिथेसी कुल का मुक्तजीवी जीवाणु है। यह अदलहनी फसलों में प्रयुक्त होते हैं। एजोटोवैक्टर कल्चर

में राइजोबियम सूक्ष्म जीवाणु के स्थान पर एजोटोवैक्टर अथवा एजोस्पाइरिलियम जीवाणु का संवर्धन किया जाता है। ये कल्चर मुख्यतः गेहूं व धान में प्रयोग किये जाते हैं। चूंकि इन फसलों की जड़ो में गांठे नहीं होती है। अतः ये मृदा में रहकर वायुमण्डलीय नाइट्रोजन जमा करते हैं। एजोटोवैक्टर में नाइट्रोजन स्थिरीकरण के अलावा बीजों के अंकुरण में वृद्धि की क्षमता भी पाई जाती है। फलतः प्रति इकाई क्षेत्रफल पौधों की संख्या में वृद्धि होती है और उत्पाद बढ़ता है, एजोटोवैक्टर द्वारा पर्याप्त मात्रा में गौद पालीसैकेराइड्स का उत्सर्जन होने से मिट्टी की सरंचना भी सुधरती है। एजोटोवैक्टर लगभग 25–40 किग्रा0 / हेक्टेयर तक नाइट्रोजन स्थिर कर सकते हैं।

नील-हरित शैवाल जैव उर्वरक

धान की फसल में नील हरित शैवाल की कुछ प्रजातियों के माध्यम से धान के खेतों में नाइट्रोजन के यौगिकीकरण के फलस्वरूप कुछ हद तक नाइट्रोजन की पूर्ति की जा सकती है। इससे अनुमानतः प्रति हेक्टेयर 10–40 किग्रा0 (औसत 30 किग्रा0) नाइट्रोजन का यौगिकीकरण होता है। धान में जलाक्रान्त दशा में नील हरित शैवाल की औरोसिता, ऐनाविना, हैप्लोसीफान, नास्टोक आदि नामक प्रजातियॉ प्रयुक्त होती है। नील हरित शैवाल में नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करने के अलावा अनेको विटामिनों, वृद्धिदार्यो, आक्सिनों का संश्लेषण एवं उत्सर्जन होता है जिससे पौधो की विशेष वृद्धि होती है।

एजोला जैव उर्वरक

एजोला तालाबों, झीलो, गड्ढ़ो में तैरता हुआ पाया जाने वाला एक निम्नवर्गीय पादप है। यह नाइट्रोजन यौगिकीकरण द्वारा पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देता है। एजोला में सहजीवी के रूप में नील हरित शैवाल एनाविना एजोली पायी जाती है, जिसका कार्य नाइट्रोजन यौगिकीकरण होता है। मिट्टी में ऐजोला के हरे पदार्थ विघटन के फलस्वरूप अधिकांश नाइट्रोजन धान की फसल को उपलब्ध हो जाते हैं। जलाक्रांत दशा में धान के खेत में नाइट्रोजन की लगभग आधी मात्रा का खनिजीकरण तीन सप्ताह के अंदर हो जाता है और 6–8 सप्ताह के अंदर दो तिहाई नाइट्रोजन का खनिजीकरण हो जाता है। अतः जलाक्रान्त दशा में एजोला धान को नाइट्रोजन उपलब्ध कराने के साथ–साथ भूमि की भौतिक एवं रसायनिक व जैविक दशा सुधारता है।

फास्फोरस विलेयी जैव उर्वरक :

फास्फोरस पौधों के लिये एक मुख्य पोषक तत्व है। ज्यादातर फास्फोरस भूमि के अंदर अघुलनशील अवस्था में जमा रहती है, जो पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाती। इस जैव उर्वरक के उपयोग से मृदा में मौजूद अघुलनशील फास्फोरस घुलनशील हो कर पौधों को उपलब्ध हो जाता है। इस प्रकार फास्फोरस वाले खादों जैसे सुपरफास्फेट की क्षमता मृदा में बढ़ जाती है। इन सूक्ष्म जीवों के प्रयोग से फास्फेट मृदा में घुलनशील बनकर प्रभावी रूप से फसल को उपलब्ध हो जाते हैं, और पौध वृद्धि में सहायता करते हैं। इन जीवाणुओं की क्षमता का अनेक फसलों जैसे गेहूं, धान, सोयाबीन, मसूर, लोबिया, चना एवं आलू आदि पर पूरे भारतवर्ष में खेतों में प्रयोग किया गया और लाभकारी प्रभाव देखा गया इनके प्रयोग से 10 से 50 प्रतिशत फसलोत्पादन बढ़ता है। फास्फोरस विलेयी सूक्ष्मजीवों को रॉक फास्फेट के साथ मिलाकर प्रयोग करने से अकेले रॉक फास्फेट के मुकाबले ज्यादा प्रभाव देखा गया और लगभग 40 प्रतिशत सुपर फास्फेट की बचत की जा सकती है। इस जैव उर्वरक का प्रयोग फसलों में किया जा सकता है।

यद्यपि जैव उर्वरकों के प्रयोग से विभिन्न फसलो में अच्छी उपज व गुणवत्ता दृष्टिगोचर होती है जैव उर्वरक हानिकारक मृदा जनित रोगों को नियंत्रित करने में भी सहायक सिद्ध होते हैं। जैव उर्वरक किसी प्रकार का प्रदूषण नहीं फैलाते हैं तथा पौधों एवं उपयोग करने वालों पर इनका कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है। ऐसे उत्पाद शरीर के लिए ही नहीं अपितु पर्यावरण की दृष्टि से भी अनुकूल साबित हो रहे हैं अर्थात जैव उर्वरक भविष्य के लिये एक आशा की किरण हैं।

■

रंजीत सिंह राघव, स्वप्निल दूबे एवं सुनील कैथवास
कृषि विज्ञान केन्द्र
रायसेन, मध्य प्रदेश
ई–मेल : raghavsinghranjeet@yahoo.co.in

स्थाई कृषि के माध्यम से गरीबी कम करना

फोटो : एस0यू0 सरवन कुमार, इंवनसीन्स,स्टडीज

किसानों की पहुँच अब 100 से अधिक प्रजातियों तक हो गयी

के० सुब्रमण्यम, एस० जस्टिन,
टी० जानसन एवं के० विजयलक्ष्मी

छोटी जोत के किसानों के साथ संगठनों के त्रिस्तरीय मॉडल ने तमिलनाडु में बेहतर सेवाएं प्रदान की हैं। प्रत्येक स्तर पर संस्थागत स्पष्टता एवं उनके बीच जैविक जुड़ाव ने कृषि से जुड़े सामाजिक एवं आर्थिक दोनों मुद्दों को समझने में सहायता प्रदान की है। संसाधनों एवं सेवाओं तक पहुंच बढ़ने से किसान समृद्धि की ओर अग्रसर हुए हैं।

तमिलनाडु के तीन जिलों – नगापट्टिनम्, तिरूवन्नामलाई एवं कांचीपुरम की अधिकांश जनता कृषि पर निर्भर करती है और बहुत गरीब है। घटती उत्पादकता, खेती की बढ़ती लागतों, सेवाओं तक कमजोर पहुंच एवं बाजार की अस्थिरता आदि बहुत से कारणों के चलते खेती निरन्तर घाटे का सौदा साबित हो रही है। एक आधारभूत सर्वेक्षण से यह निष्कर्ष निकला है कि खेती की बढ़ती लागतों, लचर कृषिगत सुविधाएं, ऋण एवं गरीबी के कारण कुछ मुख्य फसलों जैसे– मूंगफली, चना आदि की उत्पादकता में कमी आयी है।

इन्हीं कुछ परिस्थितियों में सी0आई0के0एस0 ने व्रुती लाइवलीहुड रिसोर्स सेण्टर, बेंगालुरू के साथ मिलकर छोटी जोत वाले किसानों की आजीविका बढ़ाने हेतु एक परियोजना के माध्यम से समुदाय के बीच काम करना प्रारम्भ किया। यह परियोजना डी0एफ0आई0डी0 ग्लोबल पावर्टी एक्शन फण्ड इम्पैक्ट विण्डो से अनुदानित और एच0आई0वी0ओ0एस0, नीदरलैण्ड द्वारा सह अनुदानित थी। परियोजना की मुख्य रणनीति किसान आधारित उद्योग माडल को इस क्षमता के साथ तैयार करना था कि वे स्वयं स्थाईत्व की दिशा में अग्रसर हों और बड़े प्रभावों को प्रदर्शित कर सकें। वर्तमान में परियोजना तीन जनपदों के 79 ग्राम पंचायतों में 9218 किसानों के साथ काम कर रही है।

मॉडल

गांव स्तर पर किसान समूहों द्वारा की जाने वाली विभिन्न गतिविधियों के लिए वितरण मॉडल एवं एक किसान संघ को जिले स्तर पर किसान उत्पादक कम्पनी कहा जाता है। गाँव स्तर पर कृषि सम्बन्धी सेवाएं प्रदान करने वाले प्रगतिशील किसानों के समूह को ग्राम स्तरीय कृषिगत व्यापार विकास सेवा प्रदाता कहा गया। प्रत्येक गांव

पंचायत में एक ग्रामस्तरीय कृषिगत व्यापार विकास सेवा प्रदाता का चयन किसान समूहों द्वारा किया गया। ये सेवा प्रदाता किसानों को विभिन्न प्रकार की सेवाएं उपलब्ध कराने के साथ–साथ योजनाओं और अधिकारों को किसान समूह आधारित बनाने तथा किसान एवं परियोजना / उत्पादन कम्पनी के बीच एक जुड़ाव का काम करते हैं। गाँवस्तरीय किसान समूह जैसे महिला स्वयं सहायता समूह, पुरूष स्वयं सहायता समूह, मिश्रित समूह, संयुक्त देयता समूह, किसान क्लब आदि आधारभूत इकाईयां हैं। इन समूहों में 20–25 पुरूष और महिला होते हैं और इन्हें स्थाई कृषि स्वयं सहायता समूह कहते हैं।

किसान समूहों की सबसे सर्वोच्च निकाय पंचायत कृषि विकास समिति है, जिसमें पंचायत के अन्दर आने वाले विभिन्न किसान समूहों से 10–12 प्रतिनिधि चुनकर आते हैं। पंचायत कृषि विकास समिति की मुख्य भूमिका किसान समूहों की गतिविधियों की निगरानी एवं समन्वयन की है।

विकासखण्ड स्तर पर विभिन्न पंचायत कृषि विकास समिति के संचालकों एवं पदाधिकारियों को मिलकार मिलाकर 20–30 प्रतिनिधियों के साथ क्लस्टर कृषि विकास समिति गठित होती है, जो पंचायत कृषि विकास समिति की सर्वोच्च निकाय होती है। प्रत्येक क्लस्टर कृषि विकास समिति में लगभग 15–20 पंचायत कृषि विकास समितियां आती हैं। क्लस्टर कृषि विकास समिति पंचायत कृषि विकास समिति के गतिविधियों की निगरानी एवं समन्वयन का कार्य करती है।

जिले स्तर पर कृषि उत्पादक कम्पनी गठित की गयी है। एक उत्पादक कम्पनी किसानों के लिए विभिन्न प्रकार की सुविधाएं जैसे बीमा, जैविक सत्यापन, किसानों के लिए पाठ्यक्रम आदि उपलब्ध कराने के अतिरिक्त अच्छी गुणवत्ता वाले आधारीय बीजों, निवेश जैसे नीम पाउडर, वर्मी कम्पोस्ट, जैव उर्वरक, जैव कीटनाशक, चटाई बैग, जानवरों का दाना आदि सदस्यों को उपलब्ध कराते हैं।

वर्तमान समय में यहां पर 552 स्थाई कृषि स्वयं सहायता समूह, 71 पंचायत कृषि विकास समिति, 5 क्लस्टर कृषि विकास समिति एवं 2 उत्पादक कम्पनियां हैं। इस समय में दोनों उत्पादक कम्पनियों में लगभग 4000 सदस्य हैं। परियोजना अवधि की समाप्ति के बाद, उम्मीद है कि परियोजना के सभी 9000 लाभार्थी इन उत्पादक कम्पनियों के अंशधारक हो जायेंगे।

प्रमुख निष्कर्ष

पर्यावरण–सम्मत कृषिगत अभ्यासों को अपनाना

किसानों के रसायनिक कृषिगत अभ्यासों से स्थाई जैविक

फोटो : सी0आई0के0एस0

सिरकाजी के इक्लैम घुकुडम गांव में एक चर्चा

विधियों की ओर अग्रसर होने में उल्लेखनीय प्रगति दिखाई देने लगी है। सभी खेतिहर परिवारों में से 15 प्रतिशत परिवार रसायनिक खेती से गैर कीटनाशक प्रबन्धन खेती अभ्यासों को अपना चुके हैं और अन्य 10 प्रतिशत किसान पूर्णतः जैविक खेती करने लगे हैं। लगभग 55 प्रतिशत खेतिहर परिवार परियोजना द्वारा प्रोत्साहित की गयी गतिविधियों में से कम से कम एक स्थाई कृषिगत तकनीक / अभ्यास को अपना लिये हैं। लिये गये आधारभूत आंकड़ों के अनुसार सभी प्रमुख फसलों और प्रजातियों की उत्पादकता में वृद्धि हुई है।

लागत में कमी और आमदनी में वृद्धि

निरीक्षण के दौरान नियन्त्रित समूह द्वारा जुताई की लागत में 7 प्रतिशत की कमी दर्ज की गयी। लगभग 4500 खेतिहर परिवारों की आमदनी में कम से कम 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई। लगभग 107 किसानों द्वारा 143 एकड़ परिक्षेत्र में श्री पद्धति से खेती की गयी। इस पद्धति को अपनाने से जुताई की लागत में प्रति एकड़ रू0 1250.00 की कमी आयी जिससे पूरे जनपद में रू0 178750.00 रू0 की बचत हुई। नगापट्टिनम जिले में, 45 किसानों ने श्री पद्धति को अपनाया और जुताई की लागत रू0 1200.00 प्रति एकड़ तक कम की। इस जिले में श्री पद्धति अपनाकर कुल रू0 54000.00 की बचत की गयी है।

> कृषि पारिस्थितिक अभ्यासों को अपनाने के लिए राज्यों को दीर्घकालिक नीतियों की आवश्यकता है। वे भोजन के अधिकार को अमली जामा पहनाने के लिए राष्ट्रीय रणनीतियों में कृषिगत पारिस्थितिकी और स्थाई कृषि का उल्लेख कर सकते हैं और साथ ही जलवायु परिवर्तन को कम करने के लिए राष्ट्रीय नियोजन में भी इसे शामिल कर सकते हैं।

महिलाओं द्वारा 2000 से अधिक गृहवाटिका को तैयार कर उनका प्रबन्धन किया जा रहा है, जिससे उनके परिवार को प्रति माह औसतन रू0 300.00 की आमदनी हो रही है। कुल 305 लाभार्थी विभिन्न उत्पादों में मूल्य संवर्धन के काम में लगे हुए हैं।

सामुदायिक इकाई

परियोजना क्षेत्र में समुदाय स्तरीय हस्तक्षेप तेजी से प्रचलित हो रहे हैं। समुदाय की स्वयं की एवं खुद उनके द्वारा संचालित 13 वर्मी कम्पोस्ट इकाईयां, 7 सामुदायिक जैव कीटनाशक इकाईयां, 7 सामुदायिक मूल्य सवंर्धित उत्पाद इकाईयां तीन जिलों में कार्य कर रही हैं। विशेषकर वर्मी कम्पोस्ट और मूल्य संवर्धित उत्पाद इकाईयां महिलाओं द्वारा स्वयं चलायी जा रही हैं। ये उद्योग पूरे वर्ष किसानों को गाँव के अन्दर ही उचित मूल्य पर बेहतर गुणवत्तापूर्ण निवेश को समय से उपलब्ध करा रहे हैं। इन इकाईयों से जुड़ी महिलाओं और इनमें काम कर रहे अन्य लोगों को अपनी खेती से होने वाली आमदनी के लिए अलावा प्रति माह अच्छी आमदनी हो जा रही है।

खेती सम्बन्धी यन्त्रों तक उन्नत पहुंच

14 ग्राम पंचायतों में स्थापित कृषि मशीनरी फैसिलिटेशन सेण्टरों की वजह से किसानों की कृषि सम्बन्धी यन्त्रों तक पहुंच उन्नत हुई है। इन केन्द्रों पर अनेक प्रकार के कृषि यन्त्र जैसे पावर टिलर, मिनी ट्रैक्टर्स, आयल इंजन, ट्रान्सप्लाण्टर्स, बिजली से चलने वाले कोनोवीडर, विनोवर आदि उपलब्ध हैं। अधिकांश कृषि मशीनरी फैसिलिटेशन सेण्टर अपनी सेवाएं देने के बदले किसानों से कुछ शुल्क लेते हैं, जो उनकी आमदनी का एक जरिया है। उदाहरण के लिए पेरनामल्लुर पंचायत में विनोंईग मशीन का उपयोग कर 144 टन धान की सफाई की गयी। अनाज को साफ–सुथरा करके बेचने से न केवल 50–100 रू0 प्रति

Issues and Themes of LEISA INDIA Published in English 1999-2015

V.1, No. 1, 1999 - Markets for LEISA and Organic products
V.1, No. 2, 1999 - Stakeholders in Research
V.1, No. 3, 1999 - Restoring biodiversity

V.2, No. 1, 2000 - Desertification
V.2, No. 2, 2000 - Farmer innovations
V.2, No. 3, 2000 - Farming in the forest
V.2, No. 4, 2000 - Monocultures towards sustainability

V.3, No. 1, 2001 - Coping with disaster
V.3, No. 2, 2001 - Go global stay local
V.3, No. 3, 2001 - Lessons in scaling up
V.3, No. 4, 2001 - Biotechnology

V.4, No. 1, 2002 Managing Livestock
V.4, No. 2, 2002 - Rural Communication
V.4, No. 3, 2002 - Recreating living soil
V.4, No. 4, 2002 - Women in agriculture

V.5, No. 1, 2003 - Farmers Field School
V.5, No. 2, 2003 - Ways of water harvesting
V.5, No. 3, 2003 - Access to resources
V.5, No. 4, 2003 - Reversing Degradation

V.6, No. 1, 2004 - Valuing crop diversity
V.6, No. 2, 2004 - New generation of farmers
V.6, No. 3, 2004 - Post harvest Management
V.6, No. 4, 2004 - Farming with nature

V.7, No. 1, 2005 - On Farm Energy
V.7, No. 2, 2005 - More than Money
V.7, No. 3, 2005 - Contribution of Small Animals
V.7, No. 4, 2005 - Towards Policy Change

V.8, No. 1, 2006 - Documentation for Change
V.8, No. 2, 2006 - Changing Farming Practices
V.8, No. 3, 2006 - Knowledge Building Processes
V.8, No. 4, 2006 - Nurturing Ecological Processes

V.9, No. 1, 2007 - Farmers Coming together
V.9, No. 2, 2007 - Securing Seed Supply
V.9, No. 3, 2007 - Healthy Produce, People and Environment
V.9, No. 4, 2007 - Ecological Pest Management

V.10, No. 1, 2008 - Towards Fairer Trade
V.10. No. 2, 2008 - Living soils
V.10, No. 3, 2008 - Farming and Social Inclusion
V.10, No. 4, 2008 - Dealing with Climate Change

V.11, No. 1, 2009 - Farming Diversity
V.11, No. 2, 2009 - Farmers as Entrepreneurs
V.11, No. 3, 2009 - Women and Food Sovereignty
V.11, No. 4, 2009 - Scaling up and sustaining the gains

V.12, No.1, 2010 - Livestock for sustainable livelihoods
V.12, No.2, 2010 - Finance for farming
V.12, No.3, 2010 - Managing water for sustainable farming

V.13, No.1, 2011 - Youth in farming
V.13, No.2, 2011 - Trees and farming
V.13, No.3, 2011 - Regional Food System
V.13, No.4, 2011 - Securing Land Rights

V.14, No.1, 2012 - Insects as Allies
V.14, No.2, 2012 - Greening the Economy
V.14, No.3, 2012- Farmer Organisations
V. 14, No.4, 2012- Combating Desertification

V. 15, No.1, 2013- SRI: A scaling up success
V. 15, No.2, 2013- Farmers and market
V. 15, No.3, 2013- Education for change
V. 15, No.4, 2013- Strengthening family farming

V. 16, No. 1, 2014- Cultivating farm biodiversity
V. 16, No. 2, 2014- Family farmers breaking out of poverty
V. 16, No. 3, 2014- Family farmers and sustainable landscapes
V. 16, No. 4, 2014- Family farming and nutrition

V. 17, No. 1, 2015- Soils for life
V. 17, No. 2, 2015- Rural-urban linkages
V. 17, No. 3, 2015- Water-lifeline for livelihoods
V. 17, No. 4, 2015- Women forging change

फोटो : सी0आई0के0एस0

कांचीपुरम के किसान एक प्रदर्शन प्रक्षेत्र का भ्रमण करते हुए

बोरी अतिक्रित आमदनी होती है, वरन् इससे उत्पाद की गुणवत्ता भी बेहतर होती है। कृषि मशीनरी फैसिलिटेशन सेण्टर गैर परियोजना लाभार्थियों को भी सेवाएं उपलब्ध करा रहे हैं।

परिणाम

एक ग्राम आधारित सेवा प्रदाता एवं मांग आधारित सेवाएं उपलब्ध कराने के माध्यम से छोटे मझोले किसानों के साथ काम कर रहा यह मॉडल किसानों को बेहतर सेवाएं दे रहा है। कृषि उत्पाद कम्पनियों की मदद से पंचायत से लेकर क्लस्टर एवं जिले स्तर तक यह त्रिस्तरीय माडल विभिन्न स्तरों पर कृषिगत निवेशों एवं प्राप्तियों को समय से जोड़ना सुनिश्चित कराता है।

गांव आधारित सेवा प्रदाता के रूप में स्थानीय प्रगतिशील किसानों की मदद से लक्षित समुदायों को विभिन्न सेवाएं सफलतापूर्वक देने में सहायता मिली है। किसान अब ग्राम्य कृषि व्यापार विकास सेवा प्रदाताओं द्वारा दी गयी सेवाओं का मूल्य समझने लगे हैं और इन सेवाओं के बदले शुल्क चुकाना प्रारम्भ कर दिये हैं। कुछ विशिष्ट सेवाओं जैसे सरकारी पात्रताओं की मदद, ऋण एवं बीमा तक पहुंच आदि के लिए किसान स्वयं से भी शुल्क देने को तैयार हैं।

कृषि उत्पाद समिति की कार्यकारिणी समिति में प्रतिनिधित्व, महिला समूहों के लिए उद्यम को प्रोत्साहन देना, ग्राम्य कृषि व्यापार विकास सेवा प्रदाता के रूप में महिलाओं का चयन आदि के माध्यम से महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया है और निर्णय लेने वाले मंचों पर उनकी भागीदारी बढ़ी है। न केवल इन महिलाओं की सामाजिक मान्यता बढ़ी है, वरन् महिला ग्राम्य कृषि व्यापार विकास सेवा प्रदाता के रूप में इनकी मुखरता एवं गुणवत्ता में भी वृद्धि हुई है।

कुल मिलाकर, परियोजना की उपलब्धियां महत्वपूर्ण हैं। हमने जाति एवं वर्ग से ऊपर उठकर किसानों की आमदनी में वृद्धि, उत्पादकता में वृद्धि, उत्पादन की लागत में कमी और उत्पादक कम्पनी की शुद्ध आमदनी में वृद्धि दर्ज की है। चर्चाओं में पारदर्शिता बढ़ी है और सूचित निर्णयों को लेने की सक्षमता में काफी वृद्धि हुई है। निरन्तर कार्यशीलता, अभिलेखों के रख–रखाव, नेतृत्व क्षमता की गुणवत्ता एवं बाहरी दुनिया से सम्पर्क व उसे प्रभावित करने के मामले में बड़ा सुधार दिख रहा है। महिला स्वयं सहायता समूह बचत एवं ऋण से आगे बढ़कर स्थाई कृषि अभ्यासों से सम्बन्धित मुद्दों पर काम करने के प्रति सजग हो रही है। समग्र तौर पर कहा जाये तो, इस परियोजना से खेतिहर परिवारों की गरीबी दूर करने तथा खुशहाली की ओर अग्रसर होने में सहायता मिली है।

■

के० सुब्रमण्यम, एस० जस्टिन, टी० जानसन एवं के० विजयलक्ष्मी
भारतीय ज्ञान प्रणाली केन्द्र
नं० 30, गांधी मण्डपम सड़क
कोट्टूरपुरम, चेन्नई– 600 085
ई–मेल : cikskazhi@gmail.com

Family farmers breaking out of poverty
LEISA INDIA, Vol. 16, No.2, June 2014